ॐ
प्राणायाम विधि
- महात्मा नारायण स्वामी
vaidicbooks
वैदिक पुस्तकालय
वैदिक पुस्तकालय
वैदिक पुस्तकालय

प्राणायाम विधि

लेखक :—

महात्मा नारायण स्वामी १०८

पाँचवां संस्करण]

[मूल्य ७२ न०पै०
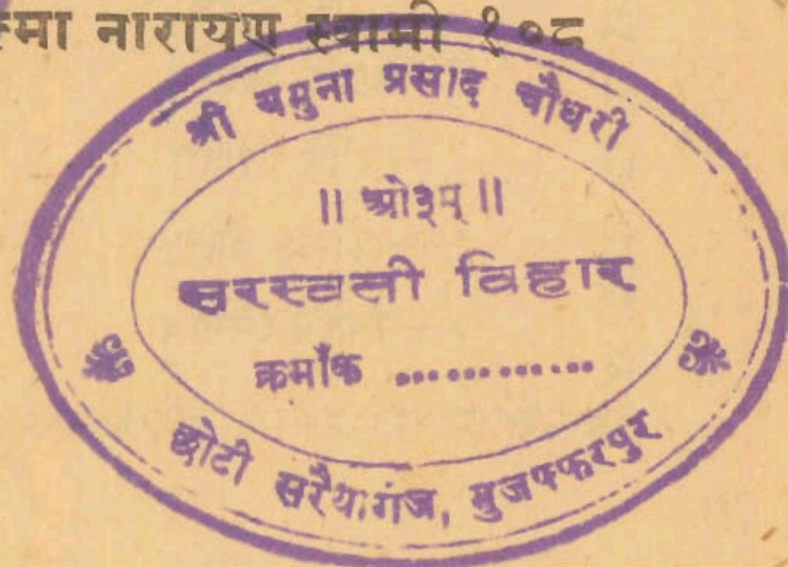
प्रकाशक—

वैदिक पुस्तकालय

सी. के० ६१/६१, सप्तसागर,

कर्णघंटा, वाराणसी—१

१—वैदिक विज्ञान

२—श्राद्ध निर्णय

३—जाति निर्णय

४—ओंकार निर्णय

५—त्रिदेव निर्णय

मुद्रक :—

ईश्वरीनारायण सिंह

विश्ववाणी प्रेस, मिश्रपोखरा, गोदौलिया,

वाराणसी ।

!! ओ३म् !!

प्राणायाम विधि

पहला अध्याय

प्रारम्भ

योग के आठ अंगों में से प्रथम के पांच (यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार) के सम्प्रज्ञात समाधि के साधन होने से ❀ बहिरंग साधना और अन्तः के तीन (धारणा ध्यान और समाधि) अन्तरंग साधन कहलाते हैं। ये अन्तरंग साधन सम्प्रज्ञात समाधि के † असाक्षात् साधन हैं। प्रथम के बहिरंग और अन्तः के अन्तरंग साधन क्यों कहलाते हैं इनका हेतु यह—कि बहिरंग साधनों से शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार कालाभ होता है। जब अन्तरंग साधनोंसे केवल मानसिक और आत्मिक उन्नति ही होती है। परन्तु ‡ अन्तरंग साधनों से जो आत्मिकोन्नति होती है वह बहुत ऊंचे दर्जे की है और वही एक प्रकार से असम्प्रज्ञात (निर्जीव) समाधि (साधन) का

❀ देखो योगदर्शन सूत्र ३–७ का व्यासभाष्य

† देखो योगदर्शन सूत्र ३–८

‡ यह अन्तरंग और बहिरंग साधनों का भेद केवल दोनों साधनों का प्रकार भेद प्रदर्शन करने के लिए है—इससे किसी साधन के अनादर करने का तात्पर्य नहीं है—योग के आठो अंग अपने अपने दर्जे में अपनी अपनी आवश्यकता रखते हैं।

यदि साक्षात् नहीं तो असाक्षात् है। इस छोटे से ग्रन्थ में योग के अन्तरंग साधनों का विचार नहीं किया जायेगा, इससे बहिरंग साधनों में से भी सबका विचार न होगा कि केवल चौथे अंग प्राणायाम के सम्बन्ध में केवल इतनी बातें कही जायेंगी जिससे योग से सर्वथा अनभिज्ञ पुरुषों में योग की ओर रुचि उत्पन्न हो जाय और वे प्रारम्भिक साधन (प्राणायाम) का प्रारम्भ भी कर सकें। यह दुःख की बात है कि भारत निवासी आर्य जाति के सुपुत्र अपने पूर्वजों की विद्या योग के उद्देश्य तक से अनभिज्ञ हैं। योग वास्तव में पूर्वी मनोविज्ञान (Eastern Psychology) है। योग के सूत्रों और उनपर किये हुए व्यास मुनि के भाष्यादि से हम शरीर के अन्तरंग से अन्तरंग (अन्तःकरणों) का ज्ञान प्राप्त करते और किस प्रकार के उन्नत किये जा सकते हैं, इसकी भी जानकारी प्राप्त करते हैं। पश्चिमी मनोविज्ञान (Western Psychology) में जहां चित् Mind और मस्तिष्क Brain के कार्यों का प्रश्न आता है वहां पश्चिमी मनोविज्ञान उन्हें हल नहीं कर सकते। किन्तु अलौकिक (Mistery) कहकर टाल दिया करते हैं, परन्तु पूर्वी मनोविज्ञान (योग) में यह बात नहीं है— उसमें स्पष्ट रीति से प्रत्येक सूक्ष्म अन्तःकरण की बात बतलायी जाती है और अभ्यासी के हाथ में इतने साधन उपस्थित कर दिये जाते हैं जिससे वह सुगमता से आत्मजगत् में प्रवेश करके जीवन के अन्तिम उद्देश्य की ओर भी झांक सके। अस्तु, इस सम्बन्ध में और अधिक न कहकर पुस्तक के विषय का प्रारम्भ करते हैं। यह बात ऊपर कही जा चुकी है कि योग के प्रारम्भिक अंगों से मानसिकोन्नति के सिवाय शारीरिकोन्नति भी होती है। सबसे पहले इसी पर दृष्टिपात करते हैं—इन प्रथम के साधनों में से भी यम और नियम से किस प्रकार शारीरिकोन्नति होती है पहले यह सवाल सामने आता है:—

यम नियम और शारीरिकोन्नति

यम पांच हैं—(१) अहिंसा (२) सत्य (३) अस्तेय (चोरी न करना) (४) ब्रह्मचर्य (५) अपरिग्रह (लोभ न करना त्यागी होना) इसी प्रकार नियम भी पांच ही हैं—(१) शौच (२) ❀संतोष (३) तप (४) स्वाध्याय (५) ईश्वर-प्रणिधान (ईश्वर-भक्ति)।

इनमें से सबसे पहली बात अहिंसा ही को ले लीजिये—अहिंसा से किस प्रकार शारीरिकोन्नति होती है, पहले इसी को देखिये।

अहिंसा और शारीरिकोन्नति

जो मनुष्य अहिंसा का पालन करेगा, आवश्यक है कि वह अहिंसक हो—हिंसा का अवलम्बन लेने से उस मनुष्य में ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, लोभ मोहादि की वृत्तियां जागृत होंगी। इन वृत्तियों की जागृति में वह जो भी भोजन करेगा वह पचेगा नहीं ❀। भोजन के न पचने से अजीर्ण, मन्दाग्नि आदि रोग उत्पन्न होंगे परिणाम यह होगा कि शारीरिकोन्नति न होगी, अपितु शरीर रोगी होकर अवनत अवस्था प्राप्त करेगा। इस प्रकार देख लिया गया कि अहिंसा को पालन करने ही से शारीरिकोन्नति होती है इसी प्रकार बाकी यम और नियमों पर विचार किया जा सकता है। अस्तु, यह सिद्ध हो गया कि यम और नियम शारीरिकोन्नति के हेतु हैं—

❀ उद्योग में सन्तोष करना आलस्य कहलाता है। उद्योग करने से जो फल प्राप्त हो उसमें सन्तोष करना सन्तोष कहलाता है।

❀ ईर्ष्याभयक्रोध परिप्लवनलुब्धेन रुग दैन्यनिपीडितेन। प्रद्वेषयुक्तेन च सेव्यमान मन्नं न सम्यक् परिपाकमेति। (माधव निदान ३-८)

आसन और शारीरिकोन्नति

जिसमें स्थिर सुख हो वह आसन है (देखो योगदर्शन-२-४६) स्थिर सुख प्राप्ति के लिये शरीर का निरोग रहना आवश्यक है। निरोगता प्राप्त करने के लिये शीर्षासन, सिद्धासन, पद्मासन, भद्रासनादि का सेवन किया जाता है। इन आसनों से अनेक रोग दूर होते हैं और अनेक प्रकार के शारीरिक लाभ हुआ करते हैं—आसन से शारीरिकोन्नति होने की बात बहुत स्पष्ट है। इसलिये इस सम्बन्ध में अधिक लिखना अनावश्यक है। अब योग के प्रारम्भिक ३ अङ्गों का उल्लेख करने के बाद योग के चौथे अङ्ग प्राणायाम का जो इस छोटी सी पुस्तक का मुख्य विषय है—जिक्र करते हैं। प्राणायाम के सम्मन्ध में सबसे पहले प्रकृत विषय ही को लीजिये कि प्राणायाम से शारीरिकोन्नति किस प्रकार होती है

प्राणायाम और शारीरिकोउन्नति

प्राणायाम से शारीरिकोन्नति किस प्रकार होती है इस बात को जानने के लिए एक दृष्टि शरीर के अन्दर होनेवाले अनिच्छित कार्यों में से हृदय और फेफड़े के कार्यों पर डालनी होगी।

हृदय का स्थूल कार्य

इस शरीर में दो प्रकार की अति सूक्ष्म नलियां है। एक तो वे जो समस्त शरीर से हृदय में आती हैं और दूसरी नलिया वे हैं जो हृदय से समस्त शरीर में जाया करती हैं। पहली नलियां "शिरा" और दूसरी "धमनी" कहलाती है।

शिराओं का काम यह है कि समस्त शरीर से अशुद्ध रक्त शुद्ध होने के लिए हृदय में लाया करें। हृदय उस रक्त को शुद्ध

करता है और शुद्ध करके शुद्ध रक्त को धमनियों के द्वारा समस्त शरीर में भेज दिया करता है। रक्त अशुद्ध क्यों होता है? इसका हेतु यह है कि समस्त शरीर के व्यापारों में उसका प्रयोग होता है और उपयोग में आने से अशुद्ध हो जाता है :—

शुद्‌ध और अशुद्‌ध रक्त का भेद

शुद्ध रक्त में कुछ चमक लिये हुये अच्छी सुर्खी होती है परन्तु जब यह अशुद्ध हो जाता है तो उसमें कुछ मैलापन आ जाता है— शुद्ध रक्त में आक्सीजन (Oxygen) काफी मात्रा में रहता है परन्तु काम में आने से जब वह अशुद्ध हो जाता है तब उसमें आक्सीजन की मात्रा नाममात्र रह जाती है और उसकी जगह एक विषैली वायु (Carbonic Acid gas) रक्त में आ जाती है और इसी परिवर्तन से रक्त का रंग मैला स्याही माइल हो जाता है।

फेफड़े का काम

हृदय में जब अशुद्ध रक्त शिराओं के द्वारा पहुँचता है तो हृदय उसे फेफड़े में भेजता है—यहीं से फेफड़े का काम शुरू होता है। फेफड़ा स्पंज की भाँति असंख्य छोटे-छोटे घटकों (Cells) का समुदाय है। एक शरीर में वैज्ञानिकों ने हिसाब लगाया है, कि यदि लम्बाई चौड़ाई में फेफड़े के इन कणों (घटकों) को फैला दिया जाय तो उनका विस्तार १४ हजार वर्गफीट होगा। वे कण एक मांसपेशी (डाएफ्रम) की चाल से खुलते और बन्द होते रहते हैं। जब ये कण खुलते हैं तब एक ओर से तो हृदय से अशुद्ध रक्त और दूसरी ओर से श्वास के द्वारा लिया हुआ शुद्ध वायु दोनों मिलकर उन्हें भर देते हैं। अब इन कणों में इस प्रकार से अशुद्ध रक्त और शुद्ध वायु दोनों एकत्र हो गये हैं। प्रकृति का

एक विलक्षण नियम (अशुद्ध रक्त शुद्ध वायु) में काम करता है। और वह नियम यह है कि जिसमें जो वस्तु नहीं होती वह उसी को दूसरे से अपनी ओर खींचती है। रक्त में तो शुद्ध वायु (आक्सीजन) नहीं हैं और श्वास के द्वारा लिये वायु में कार्बन वायु नहीं है—इन दोनों में जब उपर्युक्त नियम काम करता है तो उसका परिणाम यह होता है कि रक्त में से कार्बन वायु निकल कर श्वास के वायु में और श्वास के द्वारा आये हुये वायु में से आक्सीजन निकलकर रक्त में चला आता है। फल यह होता है कि रक्त इस प्रकार शुद्ध और श्वास के द्वारा आया हुआ वायु अशुद्ध हो जाता है। अब शुद्ध रक्त तो हृदय में जाकर धमनियों के द्वारा समस्त शरीर में चला जाता है और अशुद्ध वायु निःश्वास के द्वारा बाहर निकल जाता है। यह कार्य प्रति क्षण हुआ करता है।

हृदय की धड़कन

हृदय की धड़कन क्या वस्तु है ? एक बार हृदय से रक्त का शुद्ध होने के लिए फेफड़े में जाना और फेफड़े से शुद्ध होकर रक्त का हृदय में वापिस आना बस इन्हीं दोनों क्रियाओं से हृदय में एक धड़कन बनती है। औसतन एक मिनट में ७२ धकड़नें एक प्रौढ़ पुरुष के हृदय में हुआ करती है। विशेष अवस्थाओं में आयु के अन्तर से धड़कन की मात्रा न्यूनाधिक हुआ करती है—आमतौर से एक सेकेण्ड से कम समय ही में एकबार रक्त शुद्ध होने के लिये फेफड़े में आता और शुद्ध होकर वापस चला जाता है। एक शरीर वैज्ञानिक ने हिसाब लगाया है, कि इस प्रकार २४ घण्टे में २५२ मन रक्त हृदय से फेफड़े में आता है और इतना ही रक्त शुद्ध होकर फेफड़े से हृदय में वापस चला जाता

है । इस धड़कन की आवाज 'लूब-डप' शब्दों के उच्चारण जैसी होती है । जब हृदय संकुचित होकर रक्त निकालता है । तो 'लूब' के सदृश ध्वनि होती है और फैलकर जब रक्त ग्रहण करता है तो 'डप' शब्द की सी ध्वनि होती है । और इन दोनों ध्वनियों में समय का कुछ अन्तर अवश्य होता है । परन्तु इतना थोड़ा कि दोनों शब्द मिले हुये से मालूम होते हैं और विशेषज्ञों के सिवाय साधारण लोग इस अन्तर को नहीं ख्याल कर सकते । अस्तु, अब विचारणीय बात यह है कि—

फेफड़े में शुद्ध वायु न पहुँचने का परिणाम

यदि हृदय से रक्त शुद्ध होने के लिये फेफड़े में जावे परन्तु श्वास के द्वारा पर्याप्त वायु फेफड़े में न पहुँचे अथवा सब कोषों (कणों) में जहाँ रक्त पहुँच चुका है,शुद्ध वायु न पहुँचे तो उसका परिणाम क्या होगा ? फेफड़े के मुख्यतः तीन भाग हैं (१) ऊपरी भाग जो प्रायः गर्दन तक है (२) मध्य भाग जो दोनों ओर हृदय के इधर-उधर है (३) निम्न भाग जो 'डोयेफ्राम' (मांसपेशी) के ऊपर दोनों ओर है । साधारण रीति से जो श्वास लिया जाता है वह पूर्ण श्वास नहीं होता, इसलिये फेफड़े के सब भागों अथवा सब भागों के समस्त कोषों में नहीं पहुंचता । जब फेफड़े के ऊपरी भाग में श्वास द्वारा वायु नहीं पहुंचता तो ऊपरी भाग फेफड़े का रोगी होना शुरू होता है और उसके इस प्रकार त्रुटि-पूर्ण हो जाने से एक रोग हो जाता है जिसे ट्यूबरक्युलोसिस (Tuberculosis) कहते हैं, और जब इसी प्रकार मध्य और निम्न भाग फेफड़ों के बेकार और त्रुटिपूर्ण होने लगते हैं तो उसके परिणाम में खांसी, दमा, निमोनिया, जीर्ण ज्वरादि अनेक रोग जो फेफड़ों से सम्बन्धित हैं, होने लगते हैं । इस प्रकार

पर्याप्त वायु फेफड़े में न पहुंचने से जहाँ एक ओर फेफड़ों से सम्बन्धित रोग उत्पन्न होते हैं तो—

एक और भयंकर परिणाम

दूसरी ओर उसका एक परिणाम यह भी होता है कि हृदय से रक्त जो शुद्ध होने के लिये फेफड़े में आता है वह बिना शुद्ध हुए अशुद्ध ही हृदय में वापस चला जाता है। हृदय भी उसे रोक नहीं सकता। वहाँ से वह धमनियों के द्वारा समस्त शरीर में पहुंचता है—इसका फल रक्तविकार होता है। रक्त के विकृत होने से मामूली रोग खाज (खुजली खारिश) से लेकर भयंकर रोग कुष्ठ तक हो जाते हैं। इसलिये इन सब दुष्परिणामों से बचने के लिये आवश्यक है कि फेफड़े वायु से पूरित होते रहे और कोई भी कण (कोष) उनका ऐसा ही रहने पावे जहाँ वायु न पहुँच सके। यहीं से प्राणायाम की जरूरत का सूत्रपात होता है—

प्राणायाम की आवश्यकता

प्राणायाम के द्वारा मनुष्य के भीतर जब वह श्वास रोक देता है तब श्वास लेने की प्रबल इच्छा उत्पन्न हो जाती है—उसका फल यह होता है कि श्वास भीतर लेते समय श्वास वेग के साथ तेज हवा या आँधी के सदृश होकर फेफड़े में पहुँचता है और जिस प्रकार आँधी या तेज हवा नगर के कोने-कोने में प्रवेश करती है उसी प्रकार वेग के साथ श्वास के द्वारा भीतर लिया हुआ वायु फेफड़े के एक-एक कोष तक पहुँच जाता है और उससे न तो फेफड़ों हो में कोई खराबी हाने पाती है और न रक्त ही में विकार उत्पन्न होने पाता है। अस्तु देख लिया गया कि प्राणा-

याम शारीरिकोन्नति का हेतु ही नहीं, किन्तु मुख्य हेतु है—इसलिए आवश्यक है कि प्राणायाम किया करें।

यह बात प्रकट हो जाने पर कि प्राणायाम मानसिकोन्नति के सिवाय शारीरिकोन्नति का भी साधन है, प्राणायाम क्या है और किस प्रकार करना चाहिये, यह जानने की स्वाभाविक इच्छा उत्पन्न होती है, परन्तु यह बतलाने से पहले कतिपय उन साधनों का यहाँ उल्लेख किया जाता है, जिनपर अमल करने से अमुक रोग हो गया। परन्तु यह सब खराबियाँ जो कुछ भी हुई हो, प्राणायाम का परिणाम नहीं हो सकती, किन्तु उन असावधानियों के फल हैं, जो प्राणायाम करने में प्राणायाम करने वाले प्राय: किया करते हैं, कोई क्रिया फलवती नहीं हो सकती जबतक विधिपूर्वक न की जावे। पथ्य के बिना जिस प्रकार चिकित्सा निष्फल सी होती है उसी प्रकार अविधि से किया हुआ प्राणायाम भी लाभदायक नहीं हो सकता। अस्तु, उन साधनों को जानना आवश्यक है जिन्हें प्रयोग में लेने से वह परिस्थिति उपस्थित की जाती है जिसका होना प्राणायाम की सफलता के लिए आवश्यक है :—

प्राणायाम के उपयोगी साधन

(१) उनमें पहला साधन यह है, कि अभ्यासी का मन शुद्ध हो, मन के शुद्ध होने के लिए शुद्ध अन्न का सेवन करना आवश्यक है। शुद्ध अन्न परिश्रम और ईमानदारी से कमाये हुए धन को कहते हैं—छल और कपट से कमाया हुआ अन्न खाकर साधक सफलता प्राप्त नहीं कर सकता, क्योंकि ऐसे अन्न के प्रयोग से सदैव हृदय मलीन रहता है।

(२) यम और नियम का प्रतिदिन चिन्तन करना चाहिये और अपने किये हुए कार्यों में से जो भी कार्य इनके विरुद्ध हों

उनसे हृदय में ग्लानि उत्पन्न होनी चाहिये और ऐसे कार्यों के छोड़ने का सर्वदा यत्न करते रहना चाहिये।

(३) श्वास नाक से लेने का अभ्यास करना चाहिये। कोई कोई पुरुष मुँह से श्वास लिया करते हैं, यह अभ्यास हानि-कारक है।

(४) गहरा श्वास लेने की आदत डालनी चाहिये।

(५) मुँह ढँककर किसी ऋतु में भी नहीं सोना चाहिये। शुद्ध वायु श्वास के द्वारा फेफड़े तक पहुँचाने के लिए कम से कम नाक सदैव सोते हुए भी खुली रखनी चाहिये।

(६) प्राणायाम शुद्ध और शान्त स्थान में करना चाहिये जहाँ वायु में धूलि या धुआँ आदि हानिकारक वस्तुएँ न शामिल हों।

(७) भोजन भूख से कुछ कम करना चाहिये जिससे अजीर्ण न होने पावे।

(८) रोगी होने की दशा में प्राणायाम प्रारम्भ न करना चाहिये। इन साधनों पर दृष्टि रखने और इनके अनुकूल चलने से मनुष्य के हृदय में उस प्रकार के भाव जागृत हो जाते हैं जो प्राणायाम की सफलता के लिए आवश्यक हैं * इन साधनों में से कुछ की आवश्यक व्याख्या पुस्तक के अन्तिम अध्याय में कर दी गयी है।

---

* शेष साधनों की सभी के लिए आवश्यकता है, चाहे उनके उद्देश्य केवल शारीरिकोन्नति हो अथवा शारीरिक और मानसिक दोनों।

दूसरा अध्याय

प्राणायाम के मूल सिद्धान्त

पतञ्जलि मुनिने योगदर्शन में यम नियम और आसन के सिद्ध कर लेने के बाद प्राणायाम का विधान किया है—इन तीन अङ्गों में जहाँ एक ओर शारीरिकोन्नति होती है, वहीं दूसरी ओर मानसिकोन्नति के भी ये साधन हैं। यय नियम से मानसिकोन्नति होती है इसमें तो किसी को सन्देह नहीं हो सकता, परन्तु आसन से किस प्रकार मानसिकोन्नति होति है इसमें किन्हीं २ को सन्देह हो सकता है। परन्तु योग-दर्शन में स्पष्ट रीति से कह दिया गया है कि आसनों की सिद्धि से मनुष्य में यह योग्यता आ जाती है जिससे वह द्वन्द्वों (सरदी गरमी आदि) को सहन कर सकता है। * अब आसन की सिद्धि होने पर प्राणायाम के अभ्यास का प्रारम्भ होता है।

प्राणायाम क्या है

श्वास और प्रश्वास की गति रोकना प्राणायाम है श्वास भीतर वायु ले जाने और प्रश्वास भीतर से बाहर वायु निकलने को कहते हैं † इनकी गति रोकने का मतलब यह है कि श्वास को भीतर ले जाकर भीतर ही रोक देना इसी प्रकार बाहर निकाल

---

* ततो द्वन्द्वाऽनभिघातः ॥ (योग २-४८) अर्थात् उस आसन की सिद्धि से द्वन्द्वों की चोट नहीं लगती।

† तस्मिन्सति श्वास प्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायाम (योग०२-४९) अर्थात् उस आसन के सिद्ध हो जाने पर श्वास और प्रश्वास की गति रोकना प्राणायाम है।

ही रोक देना। प्राणायाम शब्द दो शब्दों का योग है। प्राण व याम प्राण श्वास और प्रश्वास का नाम है और आयाम का अर्थ है फैलाना अर्थात् श्वाव प्रश्वास का निग्रह करके उनके रोकने की अवधि को बढ़ाना।

प्राणायाम के भेद

प्राणायाम में तीन क्रियाएं होती हैं:—

(१) प्राण बाहर निकलना, इसको रेचक कहते हैं (२) प्राण का भीतर लेना, इसका नाम पूरक है (३) प्राण जहाँ हो वहीं रोक देना, यहस्तम्भवृत्ति कहलाती है। यह प्राणायाम देश, काल और संख्या के भेद से ३ प्रकार का है। *

(१) देशपरिदृष्ट—जिसमें थोड़ी दूर, अधिक दूर, या अत्यन्त अधिक दूर का प्राण खींचा या भरा जावे।

(२) कालपरिदृष्ट—एक दो या अधिक क्षणों तक प्राणों का भरना फेंकना ठहरना।

(३) संख्यापरिदृष्ट—एक दो या तीन या अधिक बार प्राणों को फेंकना, भरना या ठहराना।

(४) † क्रिया प्राणायाम की कुम्भक है। इस कुम्भक और

---

* सतु बाह्याभ्यन्त रस्तम्भवृत्तिः देश काल संख्याभिः परिदृष्टि दीर्घसूक्ष्म योग २।५० अर्थात् बाह्य आभ्यन्तर स्तम्भवृत्तिः भेद से तीन प्रकार का प्राणायाम देश काल और संख्या से देखा हुआ दीर्घ परन्तु सूक्ष्म होता है ....

† बाह्याभ्यन्तरविषयक्षेपी चतुर्थः ॥ (योग० २।५१ अर्थात् बाह्य और आभ्यान्तर दोनों देशों में आक्षेप करनेवाला अर्थात् जिसमें इन दोनों प्राणायामों (रेचक पूरक) का परित्याग हो, चौथा प्राणायाम है।

और स्तम्भवृत्ति नामक प्राणायाम में अन्तर यह है कि स्तम्भवृत्ति में तो प्राण बाहर या भीतर खींचे बिना जहां का तहां रोक दिया जाता है परन्तु कुम्भक में प्राण को बाहर या भीतर खींच कर रोका जाता है।

बस प्राणायाम के मूल सिद्धान्त (या मूल क्रियाएं) यही हैं और इन्हीं के आधार पर प्राणायाम के अनेक विभाग किये गये हैं और उपयोगिता दृष्टि से उन विभक्त प्राणायाम को पृथक् २ ठहराया गया है। यह ऋषियों की अपूर्व शैली का फल है कि तीन सूत्रों में प्राणायाम की समस्त क्रियाएं वर्णन कर दी गयी हैं परन्तु इस विद्या के अप्रचलित हो जाने से देशवासी इस योग्य नहीं रहे, कि इन्हीं सूत्रों को लक्ष्य में रखकर अभ्यास कर सकें, अन्यथा इन पृष्ठों के लिखने की आवश्यकता ही नहीं थी। हम आगे बतलायेंगे कि किस प्रकार एक नये अभ्यासी को प्राणायाम का आरम्भ करना चाहिये। परन्तु पहले एक प्रश्न का उत्तर देना चाहते हैं कि मानसिकोन्नति की दृष्टि से प्राणायाम क्यों करना चाहिये।

प्राणायाम का फल

प्राणायाम का फल यह है, कि उसके अभ्यास से हृदय में पड़ा हुआ तम का आवरण नष्ट हो जाता है। * हृदय में शुद्ध ज्ञान रहता है और रहना चाहिये परन्तु जब मनुष्य ऐसे काम करने लगता है जो काम क्रोध लोभ और मोहों से उत्पन्न होते हैं और जो तमोगुण की वृद्धि का फल कहलाते हैं, तो ये कर्म हृदयस्थ शुद्धज्ञान रूपी प्रकाश को आवरण (परदा) होकर ढक

---

* ततः क्षीयते प्रकाशावरणम् ॥ (योग० २।५२) अर्थात् उस (प्राणायाम साधन) से प्रकाश का आवरण क्षीण हो जाता है।

लेते हैं। अब यह ढका हुआ प्रकाश किस प्रकार उभड़े अथवा हृदय पर पड़ा हुआ तम का परदा किस प्रकार उठे। इसका साधन प्राणायाम का अभ्यास है। प्राणायाम के अभ्यास ही से उत्तरोत्तर अज्ञान तम का नाश और ज्ञान का प्रकाश बढ़ता जाता है * और जिस प्रकार अग्नि में तपाने से स्वर्णादि धातुओं के मल नष्ट हो जाते हैं।†

एक दूसरा फल

प्राणायाम का एक दूसरा फल यह होता है कि इसके अभ्यास से मनुष्य में धारणा (चित्त को एकाग्र करने) की योग्यता होती है चित्त के एकाग्र होने से एक विद्यार्थी अपना पाठ सुगमता से समझ और याद कर सकता है।

एक वैज्ञानिक सूक्ष्म से सूक्ष्मतम तत्त्वों की परीक्षा करने में समर्थ हो सकता है, एक दार्शनिक परीक्षा के विषयों में प्रविष्ट होकर अध्यात्म जगत् में दौरा लगा सकता है। एक साधारण कारबारी आदमी अपने उद्यम के छिपे से छिपे पहलुओं की जानकारी प्राप्त कर सकता है। निदान यह लोक और परलोक सभी चित्त की एकाग्रता, प्राणायाम के अभ्यास ही से प्राप्त की जाती है।

---

* योगाङ्गनुष्ठानदशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्याते (यो० २।२८)

अर्थात् योग के आठ अङ्गों के अनुष्ठा से अशुद्धि के क्षय होने पर विषेकख्याति (तत्वज्ञान) पर्यन्त ज्ञान का प्रकाश होता है।

† दह्यन्ते ध्यायमानानां धातूनां हि यथा मलाः। तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात् ॥ (मनु० ६।७१) अर्थात् जैसे अग्नि में तपाने से (सुवर्णादि) धातुओं का मल नष्ट हो जाता है उसी प्रकार प्राणायाम के अभ्यास से इन्द्रियों के दोष दूर हो जाते हैं।

प्राणायाम के अनेक फल और अनेक लाभ हैं, परन्तु उन सबको यदि मूल रूप में कहा जाय तो उनका कथन, उपर्युक्त दो ही फलों के रूप में होगा। अब हम प्रतिज्ञानुसार उस विधि का वर्णन करते हैं। जिससे नये सीखने वालों को प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिये।

तीसरा अध्याय

प्राणायाम अनेक प्रकार से अनेक कार्यों की सिद्धि के लिए किये जाते हैं यह बात पहले कही जा चुकी है।* इस अध्याय में हम उन प्राणायामों में से केवल उन्हीं प्राणायामों के अभ्यास की रीति बतलायेंगे जो आमतौर से सभी के लिए उपयोगी हो। ऐसे प्राणायामों की बात न कहेंगे जो योग के साधन की दृष्टि से ऊँची अवस्था प्राप्त कर लेने ही पर किये जाते हैं।

पहला प्राणायाम

पद्मासन या किसी आसन से जिससे सुखपूर्वक उस समय तक (बिना आसन बदले) बैठ सको जितनी देर क्रिया करनी इष्ट है बैठ जाओ। इस प्रकार की छाती, गला, और मस्तिष्क तीनों एक सीध में रहें और धीरे २ नाक की राह से श्वास बाहर निकालो (रेचक)।

(१) और उसे बाहर ही रोक दो (वाह्यकुम्भक)।

(२) जब अधिक देर बिना श्वास लिये न रह सको तो

---

* किंच धारणासु च योग्यता मनः (योग० २।५३)

अर्थात् और प्राणायामों से (धारणा) चित्त की एकाग्रता में मन की योग्यता होती है।

धीरे धीरे पूरक (श्वांस भीतर खींचों) और अब श्वांस को भीतर रोक दो (अभ्यान्तर कुम्भक)।

(३) जब और अधिक समय 'कुम्भक' (भीतर श्वांस रोके रखना) न कर सको तो धीरे धीरे रेचक करो।

(४) इसी प्रकार अनेक बार अभ्यास करो और प्रत्येक क्रिया के साथ सात सात महा व्याहृतियों (प्राणायाम मंत्र) का मानसिक जप करते रहो। जिह्वासे काम लेने की जरूरत नहीं है।

फेफड़ेके समस्त कोषोंमें वायुभरना दूसरा प्राणायाम

(१) शान्ति से, पद्मासन, अथवा किसी किसी आसन से जिससे तुम सुखपूर्वक अन्त तक बैठ सको, बैठ जाओ और नथनों से धीरे २ श्वास के द्वारा शुद्ध वायु भीतर की ओर खींचने लगो। पहले फेफड़े से नीचे के भाग को भरो और प्रबल

नोट (१) इस प्राणायाम से रेचक पूरक और कुम्भ अर्थात् प्राणायाम की प्रत्येक क्रिया करने का अभ्यास होता है जिससे आगे के प्राणायामों के करने की शक्ति मनुष्य में आती है। इस प्राणायाम का अभ्यांस इतना बढ़ाना चाहिये कि श्वास दो मिनट तक भीतर रुक सके। अधिक सामर्थ्य बढ़ाने से अधिक लाभ है परन्तु एक बात है जिसे ध्यान में रखना चाहिये कि प्रसन्नता ही से जितनी देर श्वास रुक सके रोकें चित्त परतन्त्र नहीं करना चाहिये अभ्यास से उत्तरोत्तर बाहर और भीतर दोनो ओर श्वास रोकने की अवधि स्वयमेव बढ़ती है।

नोट—अभ्यास कालों में कई प्राणायाम एक साथ करने होंगे परन्तु लगातार नहीं किये जा सकते। एक प्राणायाम के बाद दो चार श्वास लेकर तब दूसरा इस प्रकार तीसरा और चौथा आदि करना चाहिए।

इच्छा रक्खो कि फेफड़े का अधोभाग वायु से भर रहा है। इससे कुछ पेट फूलेगा इसके बाद उसी श्वास से फेफड़े के मध्यभाग में वायु पहुँचाओ। इस क्रिया से तथा आगे की समस्त क्रियाओं के साथ इच्छाशक्ति को जोड़ते जाओ, इस क्रिया से पेट कुछ पचकेगा और ऊपर छाती कुछ उभरेगी। इसके बाद श्वांस के के तीसरे और अन्तिम भाग से फेफड़े के ऊपरी भाग को भरो। इस क्रिया के प्रारम्भ करने से पहले कन्धों को कुछ ऊपर उठा लो। इन तीन क्रियाओं से पूरक पूरा होता है। इसके पूरा होने में लगभग आधा मिनट खर्च होता है।

२—इसके बाद कुम्भक करो। एक मिनट से कुछ अधिक अथवा कम से कम एक मिनट वायु को भीतर रोको। इसके साथ इच्छा यह होगी कि फेफड़े के समस्त कोष वायु से भर रहे हैं।

३—फिर रेचक करके वायु को बाहर निकालो।

तीसरा "सुखद" प्राणायाम।

प्राणायाम करने से थकान पैदा होती है उसे दूर करने के लिये। इसीलिए इनका नाम सुखद है।

१—प्राणायाम संख्या की भांति पूरक करो—

नोट—कोई और किसी प्रकार के प्राणायाम का अभ्यास करो। अन्त में 'सुखद' प्राणायाम को सदैव करलो इससे आराम मिलता है और सबका थकान दूर हो जाता है।

नोट १—यह बात याद रखनी चाहिये कि भोजन तब तक नहीं पचता जब तक उसका प्रत्येक कण आक्सिजन (ओषजन) के भीतर न घुस जावे इसलिये आमाशय और आतों में भी पर्या मात्रा में वायु रहना चाहिये।

२—उसी प्रकार इच्चाशक्ति की जोड़ते हुए कुम्भक करो—

३—रेचक मुँह से करो। मुह की स्थिती ऐसी करो जैसे सीटी बजाते हुये होती है और बेगसे अधिक बाहर में थोड़ा २ श्वास बाहर फेंको। एब बार फेंकने के बाद कुछ रुक जाओ इसी प्रकार कुछ रुक २ कर प्रत्येक बार बल पूर्वक श्वासो बाहर फेंकों।

फेफड़ोंके सिवा पेट और आंतको भी हवासे भरना

चौथा प्राणायाय

१—बांया पैर दिहनी जाँघ पर रक्खो। गर्दन और पीठ को सोधा खड़ा रक्खो। हथेलियों को घुटनों पर रख कर मुँह बन्द कर लो।

२—दोनों नथनों से धीरे-धीरे परन्तु शीघ्रता से पूरक कर और बिना कुम्भक किये ही, रेचक करो।

३—यह अभ्यास निरन्तर किये जाओ जब तक थक न जाओ अथवा पसीसा न आने लगे।

४—अभ्यास करते समय दृष्टि नासिकाके अग्र भागपर रखो।

५—थक जाने पर दाहिने नथने से पूरक करके कुम्भक करो और फेफड़ों को खूब वायु से भर लो इसके बाद बायें नथने से रेचक करके अभ्यास समाप्त कर दो।

समस्त शरीरको स्वस्थ रखनेके लिये पांचवाँ प्राणायाम

१—बांई जंघा पर दाहिना पैर और दाहिने जंघा पर बांया पैर रक्खो और दाहिने हाथ से पीठ की ओर से दाहिने पैर के अगूठे को और इसी प्रकार बायें हाथ से पैर के अगूठे को

पकड़ो यदि शरीर लचकीला और हलका न होने से अंगूठों को हाथ से न पकड़ सको तो उन अंगूठों को और अधिक से अधिक दूर जितना तुम्हारा हाथ जा सके ले जाओ और शरीर खूब अकड़ा और तना हुआ रक्खो।

२-प्राणायाम सं०(१) की भांति पूरक कुम्भक और रेचक करो

३-इतना अभ्यास करो कि शरीर के रोंगटे अच्छी तरह खड़े मालूम होने लगें।

शक्ति प्राप्त करने और स्थिर रखने के लिये छठा प्राणायाम

१—पद्मासन से बैठो। मलेन्द्रिय को खूब रुई से भर दो--

२—दाहिने नथने से पूरक करो--

३—अपनी ठोडी को छाती पर रखकर सीधे हाथ से बांये पैर के अगूठे को और बायें हाथ से सीधे हाथ के अगूंठे को पकड़ो और माथे को किसी घुटने से लगा कर कुम्भक करो।

४—बायें नथने से रेचक करो।

५—दूसरे प्राणायाम में बायें नथने से पूरक और सीधे नथने से रेचक करना चाहिये।

६—यह अभ्यास क्रमशः बढ़ाते हुये एक घण्टे तक करना चाहिये।

नोट—२ इस प्राणायाम का अभ्यास हो जाने पर इसको करने से साधारण ज्वर दूर किया जा सकता है और यदि समय पर भोजन न मिले तो इस प्राणायाम को भूख ही में करने से कुछ देर मनुष्य भूख के कष्ट से भी बच सकता है।

सातवाँ प्राणायाम

रक्त संचारक क्रिया को नियमित करने और विचार शक्ति की वृद्धि के लिये।

१—पद्मासन से बैठो दाहिने हाथ से दाहिने पैर और बायें हाथ से बायें पैर के अगूंठे को पकड़ो।

२—बाये नथने से पूरक करो।

३—फिर कुम्भक करो।

४—फिर दाहिने नथने से पूरक और बाये नथने से धीरे २ रेचक करो। बाये से रेचक करना चाहिये इसी प्रकार आगे के अभ्यास में प्रत्येक प्राणायाम में रेचक और पूरक का बदलते जाना चाहिये।

५—पसीना आने पर यह अभ्यास बन्द कर देना चाहिये।

बर्धक, इच्छाशक्ति उत्तेजक आठवाँ प्राणायाम

(१) बाये पैर की एड़ी मलेन्द्रिय पर और दाहिने पांव की एड़ी बाये पैर के जंघे पर रक्खो और ठोडी को छाती से लगाओ आखें बन्द रक्खो।

(२) गहरा और लम्बा श्वास लेकर रेचक करो।

(३) फिर कुम्भक और उसके बाद रेचक कर डालो।

(४) यह अभ्यास बढ़ाते-बढ़ाते एक घंटा तक ले जाओ।

शीत से बचने के लिये नवाँ प्राणायाम

(१) बाया पांव मलेन्द्रिय के नीचे रक्खो और ठोडी छाती पर, दोनों हाथों से बढ़ाकर सीध में फैले हुए दाहिये पांव को पकड़ लो और माथे को घुटने से लगा दो।

(२) बाये नथने से प्राणायाम सं० २ की भांति पूरक करके फेफड़े को वायु से भर दो।

(३) दृष्टि को नासिका के अग्र भाग पर जमा करके कुम्भक करो।

(४) फिर दाहिने नथने से रेचक।

(५) एक घण्टा अभ्यास करनेसे पसीना आ जाता है और रक्त की गति भी बढ़ जाती है। पसीना आने पर अभ्यास बन्द कर देना चाहिये।

आमाशय के (साधारण) रोग की निवृत्ति के लिये दसवाँ प्राणायाम

(१) दुजानु होकर बैठो और हाथों की हथेली फैलाकर जंघाओं पर रक्खो वा इस प्रकार हथेली पीठ के ऊपर हो।

(२) प्रथम पूरक, फिर कुम्भक, फिर रेचक करो।

(३) यह अभ्यास क्रमशः बढ़ाकर एक घण्टा तक ले जाओ

दांतों के रोग दूर होने और शरीर पुष्ट करने के लिये ११ वां प्राणायाम

(१) बाया पैर दाहिनी जंघा और दाहिना पैर बायीं जंघा पर रक्खो और दाहिने हाथ से दाहिने पैर और बायें हाथ से बायें पैर के अगूंठे को पकड़ो।

(२) पूरक मुंह से इस प्रकार करो कि दांतों की पंक्तियाँ भी श्वास लेने में सहायक हैं और 'सी-सी' की आवाज के सदृश ध्वनि होने लगे।

(३) कुम्भक करके दोनों नथनों से धीरे २ रेचक कर दो।

(४) ४५ मिनट तक अभ्यास बढ़ाते हुये ले जाना चाहिये।

शरीर में गर्मी की मात्रा बढ़ाने के लिये बारहवां प्राणायाम

(१) सिद्धासन से बैककर दोनों नथनों से पूरक प्रथम धीरे २ करके रेचक करो।

(२) पुनः पूरक उस (पहले) से कुछ तेजी से और फिर रेचक

(३) इस प्रकार पूरक का वेग क्रम से बढ़ाते जाओ जिससे श्वास लोहार की धौंकनी की तरह चलने लगे।

(४) पसीना आने पर अभ्यास बन्द कर लो।

तेरहवां प्राणायाम

जिह्वा, तालु, नाक कान और हलकको निरोग रखनेके लिये।

१—पद्मासन से शान्तिपूर्वक बैठ जाना।

२—जिह्वा की नोंक तालू से लगाओ फिर उनको सहायता से मुंह से पूरक करो।

३—समस्त शरीर को ढीला छोड़ते हुये कुम्भक करो।

४—नाक से रेचक करो।

५—अभ्यास बढ़ा कर ४५ मिनट तक ले जाओ।

ब्रह्मचर्य का साधक चौदहवां प्राणायाम

१—चित् लेट जाओ और कानों को मोम से बन्द कर लो जिससे बाहर का कोई शब्द न सुनाई दे और नासिका के अग्र भाग पर दृष्टि जमाओ।

२—आधा घण्टा तक इस स्थिति में रहो, रुक रुककर गहरा श्वास लेते रहो।

नोट—इस प्राणायाम के निरन्तर अभ्यास से शरीर के जोड़ों और पिंडलियों का दर्द भी जाता रहता है परन्तु अभ्यास बढ़ाकर एक घण्टे तक ले जाना चाहिये।

३—फिर आँखों की पुतलियों को ऊपर चढ़ाओ और भ्रुओं के मध्य में दृष्टि जमाओ ऐसा करने से आँखें बन्द होने लगेंगी उन्हें बन्द हो जाने दो।

४—सं० २ की स्थिति में अधिक रहने से भीतर के शब्द भी सुनाई देने लगते हैं, जिन्हें कबीर आदि महापुरुषों ने "अनहद" शब्द कहा है।

वीर्य्य स्तम्भक पन्द्रहवाँ प्राणायाम।

१—बांये पैर की एड़ी मलेन्द्रिय के निचे रक्खो और दहिना पाँव पैर के जंघा पर रक्खो।

२—नाभि में धारण करके नासिका के किसी एक छिद्र से पूरक करो।

३—फिर कुम्भक करके दूसरे छिद्र से रेचक करो।

४—इस प्रकार चौदह बार अभ्यास करो।

५—यह ध्यान रखना चाहिये कि जिस २ छिद्र से पूरक रेचक किया था, एक समय के अभ्यास में बराबर उस २ छिद्र से पूरक और रेचक करना चाहिये।

नोट १—इस क्रिया के अभ्यास से कुम्भक करने की शक्ति बढ़ती है, चित्त एकाग्र रहता और इन्द्रियों का निग्रह होता है।

नोट २—प्राणायाम प्रारम्भ करते समय सबसे प्रथम यम और नियमों को अच्छी तरह समझ २ कर चिन्तन करना चाहिये।

नोट ३—प्राणायाम की प्रत्येक क्रिया करते समय, प्रबल इच्छा मनमें यह जागृत रहनी चाहिये कि वीर्य्य की उर्ध्वगति हो रही है।

नोट ४—गृहस्थ पुरुष भी स्त्री के गर्भवती होने पर इस प्राणायाम का अभ्यास करके लाभ उठा सकते हैं:

चौथा अध्याय

प्राणायाम के उपयोगी साधनों का स्पष्टीकरण

पुस्तक को समाप्त करने से पहले यह आवश्यक समझा गया कि प्राणायाम के आठ उपयोगी साधनों में से, जो पहले अभ्यास के अन्त में, अंकित हुए हैं कुछ का स्पष्टीकरण इस प्रकार कर दिया जाये जिसे उनकी उपयोगिता पाठकोंको दयाङ्कित हो जावे।

तीसरे साधन का स्पष्टीकरण।

तीसरा साधन यह है कि नाक से श्वास लेने का अभ्यास करना चाहिये क्योंकि नाक से श्वास लेने का अभ्यास रखना चाहिए इसका उत्तर यह है कि नाक से श्वास इसी लिये सदैव लेना चाहिये क्योंकि श्वास लेने की इन्द्रिय नाक है मुँह नहीं। जो इन्द्रिय जिस काम के लिये होती हैं वह काम ठीक रीति से समाप्त होने का प्रबन्ध उसी में हुआ करता है यह प्रसिद्ध ईश्वरीय नियम है। अब चाहिये कि नाक में श्वास सम्बन्धी प्रबन्ध क्या है?

(१) पहली और मोटी बात यह है कि नाक के अनुपयोगी वस्तुओं का भीतर नहीं जाने देते।

(२) दूसरी बात यह है कि यदि कोई अनुपयोगी कण बालों की सीमा उलंघन करके भीतर चला भी गया। तो छींक द्वारा बाहर निकाल कर फेंक दिया जाता हैं।

(३) तीसरी बात यह है कि फेफड़ों के कोष अत्यन्त कोमल होते हैं, वायु जो वह पहुँचे तो उसका शीतोष्ण temperature ऐसा होना चाहिये जिसे वे सह सकें। इसीलिये नाक में प्रबन्ध यह है कि वायु श्वास द्वारा जब नाक में पहुँचता है तो

नाक के भीतर के परदे (mucus membrane) के सम्पर्क से वह अनुकूल शीतोष्ण वाला हो जाता है, और इस प्रकार फेफड़ों के कोमल कोषों को कुछ हानि नहीं पहुँचती। परन्तु मुँह में इन सबमें से एक भी प्रबन्ध नहीं है इसलिये नाक ही से श्वास लेना आवश्यक है।

पांचवें साधन का स्पष्टीकरण

पाँचवां साधन यह कि सोते भी समय मुँह खोलकर सोना चाहिए। मुँह बन्द कर सोने के बुरे अभ्यास से श्वास के द्वारा वही दुर्गन्धयुक्त वायु प्रश्वास द्वारा विषैली होकर बाहर निकल गई थी फिर भीतर जाती है और इसी प्रकार बार-बार जाती रहती है उसका परिणाम यह होता है कि इस अशुद्ध वायु के द्वारा रक्त शुद्ध होने की जगह और भी विषैली होती रहती है और फेफड़ों के कोषों में भी खराबी आती रहती है।

अभी थोड़ा समय बीता है जब एक दुर्घटना मोपलाओं में हो गई थी जो एक ट्रेन में जा रहे थे। ट्रेन में शुद्ध वायु आने के लिये मार्ग न थे और जो द्वार थे वे भी बन्द कर दिये गये थे। फल उसका यह हुआ कि मुँह से निकली अशुद्ध और विषैली वायु के बार बार श्वास के द्वारा भीतर पहुंचने से शरीर में इतना विष बढ़ गया कि जिससे १४६ मोपला कैदियों में से एक ही रात के अन्दर केवल बीस बाइस मोपला जिन्दा बचे बाकी सब के सब मर गये। इसलिये स्वस्थ रहने के लिये आवश्यक है कि पुरुष, स्त्री और बच्ची सभी को मुँह खोल कर सोने का अभ्यास रखना चाहिये।

सातवें साधन का स्पष्टीकरण

सातवाँ साधन यह है कि "भोजन इतना और इस प्रकार करना चाहिये जिससे अजीर्ण न हो, भोजन के सम्बन्ध में इस अंश में बड़ी असावधानी होती है जिसके फलस्वरूप में देश-वासियों का स्वास्थ्य खराब और आयु का ह्रास हो रहा है। भोजन का सुधार होना आवश्यक है उसके सम्बन्ध में कुछ नियम है जिनका पालन करना प्रत्येक को आवश्यक समझना चाहिये :—

(१) भोजन नियत समय पर भूख से कुछ कम करना चाहिये।

(२) एक बार भोजन करने के बाद तीन घण्टे से पहले कुछ भी थोड़ी मात्रा में भी नहीं खाना चाहिये।

(३) भोजन प्रसन्नता के साथ करना चाहिये। लोग भोजन को खराब बतलाते और उसमें अनेक त्रुटियाँ निकालते हुए अप्रसन्नता के साथ भोजन करते हैं उन्हें वह भोजन पचता नहीं है।

(४) भोजन खूब चबा-चबाकर करना चाहिये। ईश्वर ने दो प्रकार के प्राणी उत्पन्न किये हैं, एक वे जिनके दाँत हैं, दूसरे वे जिनके दाँत नहीं हैं। जैसे—चिड़ियाँ आदि जिनके दाँत नहीं हैं। उनके पेटों में एक प्रकार की पथरी (Cizzard) दी गई है जिससे वे दाँतों का काम लेकर भोजन को पीस लेते हैं। मनुष्य दाँत रखते हैं उनके आमाशय में उपर्युक्त पथरी नहीं दी गई है, इसलिये उनको दाँतों से भोजन खूब चबा-चबाकर करना चाहिये जिससे वह इतना बारीक हो जावे कि मुँह के भीतर निकलनेवाले लार (saliva) से अच्छी तरह मिल जावे।

मुँह के भीतर छः ग्रंथियाँ (Salivary Clands) हैं जिनमें वे चार तो जिह्वा और जबड़े के नीचे हैं और दो गालों में हैं। जिस समय मनुष्य भोजन करता हैं तो इन ग्रन्थियों से लार निकलने लगती है और भोजन में मिलती हैं। भोजन के जितने छोटे २ सूक्ष्म कण हो जावेंगे उतने ही अधिक मात्रा में लार उनसे मिल सकेगी और लार के मिलने ही से सुगमता से पाचन क्रिया का प्रारम्भ होता है। जो पुरुष इस प्रकार भोजन करते हैं कि भोजन न दाँतों में पीसता है न पर्याप्त मात्रा में लार उससे मिलने पाती है उससे क्या हानि होती है इस पर थोड़ा विचार करना चाहिए भोजन के सम्बन्ध में पहला काम यह है कि वह सक्कर में परिवर्तन हो जावे। यह काम ग्रंथियों से निकले हुए लार द्वारा हुआ करता है और उस समय तक बराबर होता रहता है जब तक कि भोजन आमाशय में नहीं पहुँच जाता है। जब भोजन आमाशय में सक्कर में परिवर्तन होकर पहुँच जाता है तब से आमाशय की सूक्ष्म नालियों से पाचक रस (Gastric Juice) निकल कर मिलता है और इसी पाचक रस में एक और सूक्ष्म पावक द्रव्य (pepsin) होता है। इस रस और इस पाचक द्रव्य के मिलने ही से भोजन पचता है, परन्तु ये पाचक रस और द्रव्य भोजन से तभी मिलते हैं जब भोजन शक्कर में परिवर्तित हो चुका हो यदि सक्कर में अपरिवर्तित भोजन आमाशय में पहुँचता है तो वह पचने की जगह सड़ना शुरू हो जाता है और यही सड़ा हुआ भोजन आगे-आगे आंतड़ियों में जाता है और उनमें ऐसी गन्दगी उत्पन्न करता है कि जिससे सड़ी गली वस्तुओं में उत्पन्न होनेवाले कीड़ों के सदृश्य आँतड़ियों में भी कैचुआ उत्पन्न होकर मनुष्य को रोगी बना देता है।

उधर आमाशय में सड़े हुए भोजन का सड़ा भाग बाकी रहता है, जो नये आनेवाले भोजन से मिलकर उसे भी विषैला बना देता है और इस प्रकार स्थिर अजीर्णता हो जाती हैं और सारा शरीर इसी विषयुक्त भोजन से बने रक्त द्वारा विषयुक्त होता रहता है और अनेक रोग और व्याधियाँ शरीर में उत्पन्न हो जाती है। परन्तु ये सब भयानक परिणाम केवल भोजन को चबाकर न खाने से और उसे लार द्वारा शक्कर में परिवर्तित न कर देने के हैं। इसलिये भोजन खूब चबाकर करना आवश्यक है। भला जब शरीर भोजन के ठीक न करने ऐसा खराब और इतना विषयुक्त हो तब प्राणायाम के लाभ प्राणायाम से किस प्रकार हो सकते हैं ? इसलिये प्राणायाम के उपयोगी साधन जो बतलाये जा चुके उनको काम में लाना आवश्यक है तभी प्राणायामका कुछ फल निकल सकता है और सच तो यह है कि प्राणायास न करने वालों को भी इन नियमों का पालन करना आवश्यक है तभी वे तन्दुरुस्त रह सकते हैं।

❀ समाप्त ❀

॥ भजन ॥

हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मगन,
उसे कोई क्लेश लगा न रहा।
जब ज्ञान की गङ्गा में नहाया,
तो मन में मैल जरा न रहा ॥
परमात्मा को जब आत्मा में,
लिया देख ज्ञान की आँखों से।
परकाश हुआ मन में उसके,
कोई उससे भेद छिपा न रहा ॥
पुरुषारथ ही इस दुनिया में,
सब कामना पूरी करता है।
मन चाहा सुख उसने पाया,
जो आलसी बन के पड़ा न रहा ॥
दुख दायक हैं सब शत्रु हैं,
यह विषय हैं जित ¶ नियां के।
वही पार हुआ भवसागर से,
जो जाल में इनके फंसा न रहा ॥
यह वेद विरुद्ध जब मत फैले,
पत्थर की पूजा जारी हुई।
जब वेद की विद्या लोप हुई,
तो ज्ञान का पाँव जमा न रहा ॥

यहां बड़े—बड़े महाराजा हुए,

बलवान हुए विद्वान हुए।

पर मौत के पञ्जे से केवल,

कोई रचना में आके बचा न रहा ॥

॥ धन्यवाद गीत ॥

आज मिल सब गित गाओ उस प्रभू को धन्यवाद।
जिसका यश नितगाते हैं गन्धर्व गुणी जन धन्य० ॥
मंदिरों में कन्दरों में पर्वतों के शिखर पर।
देते हैं लगातार सौ-सौ बार मुनिवर धन्य० ॥ २ ॥
करते हैं जंगल में मंगल पक्षिगण हर शाखपर।
पाते हैं आनंद मिल गाते हैं स्वर भर धन्य ॥ ३ ॥
कुएँ में तालाब में सिन्धु की गहरी धारा में।
प्रेम रस में तृप्ति हो करते हैं जलधर धन्य० ॥ ४ ॥
शादियों में जलसाओं में यज्ञ उत्सव आदि में।
मीठे स्वर से चाहिये करें नारिनर सब धन्य० ॥ ५ ॥
गानकर अभी चंद भज आनन्द ईश्वर स्तुति।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता कान धर-सब धन्य० ॥६॥